International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN : 2581-9925, Impact Factor: 5.143, Volume 02, No. 02, April - June, 2020, pp.197-200

# भारतीय संगीत के विकास में सृजनात्मक रचना 'लहरा' का योगदान

मोहनलाल*

## प्रस्तावना

भारतीय शास्त्रीय संगीत में लहरा का अतुलनीय योगदान है। इसे 'नग़मा' भी कहते है। 'लहरा' संगीत के सातों स्वरों में गुंथी हुई एक आवर्तन की ऐसी रचना है जो तबला, पखावज़ (ताल वाद्यों) और कथक नृत्य प्रदर्शन के साथ प्रयोग किया जाता है। विभिन्न संगीत के विद्वानों द्वारा लहरा के पक्ष में यही विचार मिले हैं कि लहरा में लहरों की भाँति उत्सुकता है, इसके स्वर बजते ही एक लहर सी आ जाती है, मस्ती आ जाती है। 'लहरा' के स्वरों में इतनी उत्सुकता होती है कि सुनते ही मन में प्रसन्नता के भाव उभरते हैं तथा तबला या परवावज़–वादक का मन करता है कि मैं बजाऊँगा इसके साथ और नृतक कहे कि हमें नृत्य करना है इसके साथ। लहरा सदियों से ही संगीत के क्षेत्र में अपनी अहम् भूमिका निभाता आ रहा है।

उत्तर भारतीय संगीत की यह सबसे बड़ी विशेषता रही है कि लहरा विभिन्न ताल वाद्य–यंत्रों और नृत्य के साथ भिन्न–भिन्न स्वर वाद्य यंत्रों जैसे– सारंगी, हारमोनियम, वायलिन तथा सितार इत्यादि के साथ संगति के रूप में बजता आया है। लहरा विभिन्न रागों में एक आवर्तन की ऐसी धुन है जिसमें रागदारी, स्वर–संगतियां, लयकारियाँ, ताल–खण्ड, छंद, और स्वर–संवाद की विभिन्न विशेषताएं मिलती है। विभिन्न लहरा–वादकों, संगीताचार्यों और नृत्याचार्यों से भेंटवार्ता करने के बाद भारतीय शास्त्रीय संगीत में लहरा का महत्वपूर्ण योगदान देखने को मिला है।

## 'लहरा' का अर्थ एवं परिभाषा

उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत में कथक नृत्य एवं ताल–वाद्यों (जैसे तबला, पखावज़) की संगति के लिए स्वर व लय में निबद्ध एक आवर्तन की धुन जो बार–बार दोहराकर सम पर आती है वह धुन 'लहरा' कहलाती है। 'लहरा' संगीत में कथक नृत्य व ताल–वाद्यों के लिए समय मापने का साधन होता है। जिस प्रकार संगीत में समय–मापने की दृष्टि से शास्त्रीय गायन व स्वर वाद्यों की संगति के लिए 'ताल' का प्रयोग किया जाता है उसी प्रकार संगीत में ताल की बंदिशों के समय को मापने के उद्देश्य से कथक नृत्य एवं ताल वद्यों की संगति के लिए 'लहरा' अथवा 'नगमा', का प्रयोग किया जाता है, जिसका कथक नृत्य व ताल–वाद्यों के सन्दर्भ में अहम् स्थान है।

इसे उर्दू में 'नग़मा' कहते हैं। उत्तर भारतीय संगीत की यह विशेषता है कि नृत्य के साथ हारमोनियम, सारंगी अथवा वॉयलिन पर लहरा बजाया जाता है। लहरा एक आवृति का होता है। इसकी उपयोगिता यह है कि नर्तक, तबलिया तथा दर्शक को यह मालूम होता रहे कि किसी भी समय ताल की कौन सी मात्रा चल रही है। जब कभी नर्तक मुक्त रूप से नृत्य करता है तो तबलिया उसकी वैसी ही संगति करता है और लहरे के सहारे दोनों सम पर या अन्य किसी भी मात्रा पर आ मिलते हैं।''[1]

''वर्तमान में कत्थक–नृत्य में हारमोनियम व सारंगी पर 'लहरा' बजाया जाता है। कुछ नर्तक वॉयलिन व सितार पर भी हारमोनियम के साथ–साथ 'लहरा' बजवाते है। ताल–वाद्य के रूप में तबला व पखावज़ का प्रयोग किया जाता है। आममौर पर नृत्य के बोलों व ताल के ठेके को तबले पर बजाया जाता है।''[2]

[6] सहायक प्रोफेसर, संगीत विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, राजस्थान।

**पं. हनुमान सहाय के अनुसार –** ''लहरा का मतलब लहर आ जाना, मस्ती आ जाना, किसी चीज़ को सुनते ही प्रसन्नता आ जाना अर्थात् ये एक ऐसी धुन है जो लय और ताल में बद्ध होकर एक लहर के समान चलती है और सबके मन को प्रसन्न करती है।

**परिभाषा–** ''जो मात्रा–टू–मात्रा चले वो 'नगमा़' है।''[3]

**श्री मुन्ना लाल भाट के अनुसार –** ''लहरा माप–तोल का सबसे बड़ा आधार है।''[4]

**प्रो. रवि शर्मा के अनुसार –** ''जब भी किसी वाद्य के साथ उसके मीटर में या उसके ताल की मात्राओं के साथ किसी सांगीतिक धुन की स्वरलिपि या बंदिश बजाते हैं तो वो 'लहरा' कहलाता है।[5]

**लहरा का सांगीतिक विधाओं में प्रयोग**

भारतीय शास्त्रीय संगीत में 'लहरा' को कथक नृत्य व ताल–वाद्यों के लिए समय मापने का साधन अर्थात् आधार माना गया है। जिस प्रकार संगीत में समय मापने की दृष्टि से शास्त्रीय गायन व स्वर वाद्यों की संगति के लिए ताल का प्रयोग किया जाता है उसी प्रकार संगीत में ताल की बंदिशों के समय को मापने के उद्देश्य से कथक नृत्य व ताल वाद्यों की संगति के लिए 'लहरा' अथवा 'नग़मा' का प्रयोग किया जाता है, जिसका कथक नृत्य व ताल वाद्यों के संदर्भ में महत्वपूर्ण योगदान है।

अतः लहरा का प्रयोग मुख्यतः निम्नलिखित विधाओं के साथ होता है:

- कथक नृत्य
- पखावज़–वादन
- तबला–वादन
- अन्य कुछ ताल वाद्यों के साथ

विद्वानों के अनुसार सर्वप्रथम 'लहरा' शब्द का प्रादुर्भाव 'परवावज़' की संगति के लिए माना जाता है। कलाकारों द्वारा सर्वप्रथम लहरा का प्रयोग सारंगी पर ही किया होगा। तत्पश्चात धीरे–धीरे यह हारमोनियम सितार एंव वॉयलिन इत्यादि वाद्यों पर बजाया जाने लगा होगा। वर्तमान में हमें हारमोनियम वाद्य का प्रयोग अधिक देखने व सुनने को मिलता है।

''आज के युग में सारंगी का स्थान हारमोनियम ने ले लिया है। नृत्य तथा गायन दोनों ही कलाओं में हारमोनियम का प्रयोग अधिक होने लगा है। कथानकों पर आधारित संरचनाओं में अथवा कथक पर आधारित नृत्य नाटिकाओं में सितार, बांसुरी, वॉयलिन आदि का प्रयोग किया जाता है।''[6]

''लहरे का प्रयोग नृत्य, परवावज़, तबला, मृदंग आदि जो–जो भी ताल के लिए वाद्य–यंत्र हैं उन सबके साथ होता है। भरत नाट्यम में भी 'लहरा' होता है अर्थात् भरत नाट्यम में जब भी वे कोई भी ताल लेकर नाचते हैं तो एक टाईम सर्कल लेकर नाचते हैं, उसी के हिसाब से वो एक धुन बजाते रहते हैं या कोई गाना होता है उसकी पुनरावृत्ति होती रहती है। वाद्यों पर तो वो भी एक तरह का नग़मा ही होता है।[7]

प्राचीनकाल से जब से मानव सभ्यता का विकास हुआ और साथ ही साथ संगीत का भी विकास हुआ तभी से ही संगीत की विभिन्न विधाओं का विकास भी माना जा सकता है। जैसे–जैसे कुछ ऐसे वाद्यों का विकास तथा कथक नृत्य का विकास हुआ जिनके साथ संगती को लेकर प्रस्तुतीकरण की जरूरत पड़ी तो उनके साथ तभी से 'लहरा' का प्रारंभ माना जा सकता है। इसी प्रकार लहरा का विकास भी एकल ताल–वाद्यों और कथक नृत्य के विकास के साथ–साथ माना जा सकता है, अर्थात् ''वैश्याओं अथवा कथकों रास/लीला नर्तकों द्वारा ठुमरी के साथ कथक नृत्य–शैली में भावों की अभिव्यक्ति की परम्परा रही है। नृत्य की प्रायः सभी प्रमुख शैलियों कथक, मणिपुरी, ओडिसी इत्यादि का उद्भव रास–लीलाओं से ही हुआ है।''[8]

''विशेषकर आठारहवीं शती में कथक नृत्य के आविष्कार व प्रचलन के बाद कथक–नृत्याचार्यों ने दो तरह से ठुमरी का उपयोग नृत्य के साथ किया।''[9]

**स्वर पक्ष**

विभिन्न लहरों की स्वरलिपियों का अध्ययन करने से हमें पता चलता है कि विभिन्न रागों के लहरों की एक आवर्तन की स्वरलिपि में भी रागों के स्वर–संवाद, स्वर–संगतियां और वादी–संवादी स्वरों आदि का प्रयोग बड़े ही सुन्दर और सहज ढंग से किया गया है। विभिन्न लहरा–वादकों, संगीताचार्यों और नृत्याचार्यों से भेंटवार्ता करने के बाद भारतीय शास्त्रीय संगीत में लहरा का महत्वपूर्ण योगदान देखने को मिला है।

इस प्रकार यह अत्यधिक महत्वपूर्ण है कि एक लहरा की स्वरलिपि में और एक ही आवर्तन में सम्पूर्ण राग की छाया प्रतीत हो तथा वादी–संवादी स्वरों का भी सम्पूर्ण प्रभुत्व दिखाई पड़े। लहरा–वादक को भी यह ध्यान में होना चाहिए कि जो भी लहरा बजाया जा रहा है वो किसी विशेष राग में है या एक या एक से अधिक रागों का मिश्रण है। कुछ लहरों के स्वर मिश्रित रागों में भी देखने को मिलते हैं। जब से लहरा शास्त्र पक्ष में आया है, तबसे लहरों की स्वरलिपियां तो देखने को मिलती है, वरना पहले के गुणी लोग तो रास–लीलाओं, राम–लीलाओं आदि में लहरा (एक प्रकार की धुन) बजाया करते थे।

**ताल पक्ष**

लहरा–वादन में स्वर के साथ–साथ ताल–पक्ष भी सबसे महत्त्वपूर्ण भाग है। लहरा अर्थ ही ताल के आवर्तन में सम से सम तक स्वरों की एक धुन, एक रचना (स्वरलिपि) कायम करना है, जिसमें विभागों का पता चले और जो लय में बद्ध भी हो। अतः लहरा ताल और लय मापने का एक पैमाना, एक तरजू माना जाता है।

**लहरे का लयकारी पक्ष**

**राग चन्द्रकौंस पर आधारित तीनताल में निबद्ध प्राचीन 'लहरा'**

| | | | | | | | | | | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| मात्रा | 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 | 11 | 12 | 13 | 14 | 15 | 16 |
| स्वर | सां | सां | सां | सां | नि | ध | नि | सां | नि | ध | म | गसा | ग | म | ध | नि |
| चिन्ह | x | | | | 2 | | | | 0 | | | | 3 | | | |

उपरोक्त लहरे का जब हम दुगुन करेंगे तो यह लहरा मध्य लय का लहरा कहलाऐगा, क्योंकि तीनताल में मध्य–लय का एक आवर्तन आठ मात्रा का होता है।

**मध्यलय ताल – तीनताल में**

| | | | | | | | | | | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| स्वर | सांसां | सांसां | निध | निसां | निध | म गसा | गम | धनि | सांसां | सांसां | नीध | नीसां | निध | म गसा | गम | धनि |
| चिन्ह | x | | | | 2 | | | | 0 | | | | 3 | | | |

इसी प्रकार जब हम मध्यलय के नगमें को दुगुन में अथवा विलंम्बित लय के नग़मे को चौगुन में करेंगे तो वह नग़मा द्रुत लय का नग़मा बनेगा।

| | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| सांसांसांसां | निधनिसां | निधमगसा | गमधनि | सांसांसांसां | निधनिसां | निधमगसा | गमधनि |
| x | | | | 2 | | | |
| सांसांसांसां | निधनिसां | निधमगसा | गमधनि | सांसांसांसां | निधनिसां | निधमगसा | गमधनि |
| 0 | | | | 3 | | | |

इस प्रकार शास्त्रीय संगीत में स्वरकारी के साथ–साथ लय और लयकारी का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। कोई भी स्वर या वर्ण की चलन लय में होते हुये कभी–कभार लय से थोड़ा हट जाती है तो समझदार श्रोता को बड़ा झटका सा लगता है। उसे बेलय और बेताल असह्य हो जाता है। जब कभी कोई नर्तक बेताल हो जाता है और उसका सम मुख्य सम से हटकर लगता है तो मार्मिक श्रोता को आंतरिक कष्ट होता है, लेकिन जब वह बेलय हो जाता है तो कलाकार के अधकचरेपन का परिचय मिलता है। इसीलिये कथक नृत्य के कार्यक्रम में

हारमोनियम, सारंगी, वायलिन या अन्य किसी स्वर–वाद्य से लहरा देने की शास्त्रीय परम्परा है। लहरा किसी ताल में तथा एक आवर्तन में होता है। 'लहरा' की ताल और लय नर्तक की इच्छा के अनुसार होती है। अगर तीन ताल का लहरा है तो उसकी 16 मात्रायें और 4 विभाग होंगें। झपताल के लहरे में 10 मात्रायें और 4 विभाग क्रमशः 2, 3, 2, 3 मात्राओं की होगी। इसलिए लहरा की प्रकृति ताल के समान होगी जब तक कलाकार नृत्य करता रहेगा, साजिंदा लहरा बजाता रहेगा नर्तक की इच्छा के अनुसार वह लहरे की लय घटाता–बढ़ाता रहेगा। तबलिया भी नर्तक की तबला–संगत करता रहेगा। दोनों को लहरे को देखते हुए सम से मिलना होगा और जब नर्तक और तबलिया मुक्त संगत करते हुए लहरे के सम पर आकर मिलते हैं तो श्रोताओं को ताली बजाकर उनकी प्रशंसा करनी पड़ती है। इसलिए लहरा नर्तक और तबलिया दोनों के लिये ऐसा मापदंड है जिसे दोनों का ध्यान रखना पड़ता है।[10]

## निष्कर्ष

विभिन्न विद्वानों के मतानुसार एवं शास्त्रीय संगीत परम्परानुसार भारतीय शास्त्रीय संगीत में कथक नृत्य,स्वतंत्र परवावज–वादन तथा तबला–वादन आदि ताल–वाद्यों के साथ हारमोनियम, सारंगी, वॉयलिन, सितार अथवा अन्य किसी स्वर–वाद्य से लहरा देने की शास्त्रीय परम्परा प्राचीनकाल से ही चली आ रही है, क्योंकि बिना लहरे की संगति के वादन और नृत्य दोनों में ही रस निष्पत्ति संभव नहीं है, अर्थात् सम्पूर्ण संगीत गायन, वादन और नृत्य सौन्दर्य एवं रस की नींव पर ही टिका हुआ है जिसे सुनकर और देखकर श्रोता मंत्र मुग्ध हो जाते हैं तथा कलाकार अपनी साधना द्वारा अपनी आंतरिक भावनाओं और कला का प्रदर्शन कर पाता है।

अतः लहरे के बिना एक वादन और कथक नृत्य की प्रस्तुतियाँ होना असंभव है। 'लहरा' तो संगति का प्राण माना गया है, उसकी आत्मा माना जाता है। जिस प्रकार एक शरीर बिना आत्मा के नहीं चल सकता उसी प्रकार बिना 'लहरे' के स्वतंत्र वादन और नृत्य भी नहीं चल सकता। इस प्रकार 'लहरा' स्वतंत्र वादन और नृत्य के साथ संगति के लिए अपनी अहम् भूमिका रखता है तथा कलाकारों और श्रोताओं के आनंद का अभिन्न भाग है। लोक–नाट्य,लोक–गीत, तमाशा, बैंक ग्रांऊड म्यूजिक, रास–लीलाओं, राम–लीलाओं, संगीत निर्देशन, कथक नृत्य और एकल–वादन इत्यादि में संगति के रूप में 'लहरा' का अतुलनीय योगदान है और ये प्रथा सदियों से ही चली आ रही है।

## संदर्भ ग्रन्थ सूची


1. हरिश्चन्द्र श्रीवास्तव, कथक नृत्य परिचय, प्रकाशक–संगीत सदन प्रकाशन, 134, साउथ मलाका, इलाहाबाद–211001, पृ. 142
2. डॉ. प्रेम दवे, कथक नृत्य परम्परा, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, प.सं. 255
3. साक्षात्कार – पं. हनुमान सहाय, वरिष्ठ मांड, शास्त्रीय गायक एवं लहरा–वादक, जयपुर, दिनांक 16.9. 2018, समय सांय 5.45
4. साक्षात्कार – मुन्ना लाल भाट, लहरा–वादक, कथक केन्द्र, जयपुर, दिनांक 18.9.2018, समय सांय 5.59
5. साक्षात्कार – प्रो. रवि शर्मा, सेवानिवृत्त प्रोफेसर, संगीत विभाग, एम.डी. यूनिवर्सिटी, रोहतक, हरियाणा, दिनांक 20.10.2018, समय सांय 4:20
6. डॉ. गीता रघुवीर, कथक नृत्य शास्त्र, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, पृ.सं. 142
7. साक्षात्कार – मोहम्मद आयुब, सारंगी–वादक, कथक केन्द्र, नई दिल्ली, दिनांक 20.10.2018, समय सांय 12.40
8. उपशास्त्रीय संगीत अंक, जनवरी 2003, 'ठुमरी से नृत्य का रिश्ता', डॉ. लावण्य कीर्ति सिंह 'काव्या', पृष्ठ 105, प्रधान सम्पादक– डॉ. लक्ष्मीनारायण गर्ग, वर्ष 69/अंक 1 जनरी 2003
9. छायानट, अंक 27–28, ठुमरी के विकास में लखनऊ का योगदान : भारतेन्दु वाजपेयी, ठाकुर जयदेव सिंह के अनुसार, पृ. 8.
10. हरिश्चन्द्र श्रीवास्तव, कथक नृत्य परिचय, संगीत सदन प्रकाशन 134, साउथ मलाका, इलाहाबाद–211001, पृ. 189.


❖◆❖